करने में सही था और इस न्यायालय द्वारा इसमें इप्सित हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है । अतएव, अपील खारिज की जाती है और खर्चे का कोई आदेश नहीं दिया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

क.

[2018] 4 उम. नि. प. 174

वाई. पी. सुधनवा रेड्डी और अन्य

बनाम

अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, कर्नाटक मिल्क फैडरेशन और अन्य

25 अप्रैल, 2018

न्यायमूर्ति आर. के. अग्रवाल और न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 151, आदेश 41, नियम 27 – न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति की व्यावृत्ति – अतिरिक्त साक्ष्य – वादगत भूमि पर हक संबंधी घोषणा के लिए वाद – भूमि अर्जन अधिनियम के अधीन जारी की गई अधिसूचनाओं का अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में फाइल किया जाना – यदि अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में फाइल किए गए दस्तावेजों से यह स्थापित होता है कि वादगत भूमि के संबंध में वादकर्ता का कोई प्रथमदृष्ट्या हक अस्तित्व में नहीं था और इन दस्तावेजों को पूर्व में फाइल न करने के संबंध में समाधानप्रद रूप से स्पष्टीकरण दे दिया जाता है तथा वे दस्तावेज पक्षकारों के अधिकारों को विनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं तो अतिरिक्त साक्ष्य को अनुज्ञात करने वाला आदेश उचित होगा ।

प्रस्तुत मामले में, वादगत भूमि के मूल धारक ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध वादगत भूमि के संबंध में स्थायी व्यादेश के लिए एक सिविल वाद फाइल किया जिसमें उसने अन्य बातों के साथ-साथ यह दावा किया कि वादगत भूमि पर उसका कब्जा है और प्रत्यर्थी उसके कब्जे में हस्तक्षेप करने का प्रयास कर रहा है । वह वाद नोटिस की कमी के कारण खारिज कर दिया गया । इसी बीच, वादगत भूमि के मूल धारक की मृत्यु हो गई । इसके बाद उसके वारिसों (अपीलार्थियों) ने वादगत भूमि के संबंध में एक घोषणा

और स्थायी व्यादेश के लिए वाद फाइल किया । अपीलार्थियों ने अपने पूर्वज (मूल धारक) के माध्यम से हक का दावा किया और वे मूल धारक की मृत्यु के पश्चात् उत्तराधिकार द्वारा वादगत भूमि के स्वामी हैं और प्रत्यर्थी का वादगत भूमि में कोई अधिकार, हक और हित नहीं है और न ही उसे उनके कब्जे में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार प्राप्त है । प्रत्यर्थी ने इससे इनकार किया और यह कथन किया कि वादगत भूमि को बहुत पहले राज्य सरकार ने लोक प्रयोजनों के लिए अर्जित कर लिया था और वह भूमि प्रत्यर्थी को मूल्यवान प्रतिफल के बदले आबंटित की गई थी और तब से वादगत भूमि पर उनका कब्जा है और वे अपना कारबार कर रहे हैं । प्रत्यर्थी ने यह भी दलील दी कि अपीलार्थियों द्वारा फाइल किया गया वाद उनके पिता (मूल धारक) द्वारा वादगत भूमि के संबंध में प्रत्यर्थी के विरुद्ध फाइल किए गए पूर्ववर्ती वाद के खारिज हो जाने के कारण पूर्व-न्याय के सिद्धांत द्वारा वर्जित है, जिसमें इसी अनुतोष का दावा किया गया था किन्तु अपीलार्थियों के मृत पिता को ऐसा अनुतोष देने से इनकार कर दिया गया है । प्रत्यर्थी ने अन्य विधिक अभिवचन भी किए, जैसे वाद परिसीमा द्वारा वर्जित है, इसका न तो उचित रूप से मूल्यांकन किया गया है और न ही दावाकृत अनुतोष के संबंध में उचित न्यायालय फीस का संदाय किया गया है, आदि । विचारण न्यायालय ने यद्यपि वाद को परिसीमा द्वारा वर्जित होने के कारण खारिज कर दिया था तथापि, उसने अपीलार्थियों को वादगत भूमि का स्वामी अभिनिर्धारित किया था । अन्य शब्दों में, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी वादगत भूमि पर अपना स्वामित्व साबित करने में समर्थ हुए थे किन्तु उसने वाद को परिसीमा द्वारा वर्जित होने के कारण खारिज कर दिया था । यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रत्यर्थी अपना पक्षकथन साबित करने में असफल रहे चूंकि वे अपने इस पक्षकथन के समर्थन में कोई दस्तावेज फाइल करने में असफल रहे कि वादगत भूमि का राज्य द्वारा अर्जन किया गया था । अपीलार्थियों ने अपने मामले की खारिजी से व्यथित महसूस करते हुए उच्च न्यायालय में प्रथम अपील फाइल की जबकि प्रत्यर्थियों ने उनके विरुद्ध अभिलिखित स्वामित्व संबंधी निष्कर्ष से व्यथित महसूस किया और सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41, नियम 22 के अधीन प्रत्याक्षेप फाइल किए । प्रत्यर्थी ने भी अपने पक्षकथन के समर्थन में, अपील में, संहिता के आदेश 41, नियम 27 के अधीन एक आवेदन फाइल किया और राज्य द्वारा भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 4 के अधीन जारी की गई उस अधिसूचना की प्रति फाइल की जिसके द्वारा राज्य ने वादगत भूमि का अर्जन किया था । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थियों की ओर से फाइल की गई

अपील खारिज कर दी, प्रत्यर्थी द्वारा संहिता के आदेश 41, नियम 27 के अधीन फाइल किया गया आवेदन तथा प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किया गया प्रत्याक्षेप भी मंजूर कर लिया और अपीलार्थियों के वाद को खारिज कर दिया । इस निर्णय से व्यथित महसूस करते हुए, अपीलार्थियों(वादियों) ने विशेष इजाजत लेकर इस न्यायालय में प्रस्तुत अपीलें फाइल की हैं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – राज्य द्वारा भूमि अर्जन अधिनियम के अधीन अधिसूचना जारी किए जाने के परिणामस्वरूप, वर्ष 1941 के पश्चात् वादगत भूमि पर न तो अपीलार्थियों के हक-पूर्वाधिकारी और न ही अपीलार्थियों का कोई अधिकार, हक और हित अस्तित्व में था । इसका कारण यह था कि वादगत भूमि पर अपीलार्थियों के हक पूर्वाधिकारी के स्वामित्व संबंधी सभी अधिकार, अधिनियम के अधीन अर्जन कार्यवाहियां पूरी हो जाने के पश्चात् राज्य में निहित हो गए थे । अपीलार्थियों के पास केवल यह अधिकार उपलब्ध था कि वे या तो भूमि अर्जन कार्यवाहियों को अधिनियम के उपबंधों के विरुद्ध होने के आधार पर चुनौती दें या अधिनियम की धारा 11 के अधीन वादगत भूमि के संबंध में अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर का दावा करें जिसके पास अधिनियम की धारा 18 के अधीन निर्देश कार्यवाहियां की जा सकती हैं और अंततः उच्च न्यायालय के समक्ष उसके पुनर्निर्धारण के लिए अपील करें । अपीलार्थियों द्वारा फाइल किया गया वह वाद, जिसमें वादगत भूमि पर उनके हक की घोषणा करने और इसके अतिरिक्त स्थायी व्यादेश का दावा करने की ईप्सा की गई है, पूर्णतः भ्रामक है और वह खारिज किए जाने योग्य है । (पैरा 23 और 25)

तथापि, अपीलार्थियों के विद्वान् काउन्सेल ने यह तर्क दिया कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41, नियम 27क के उपबंधों का अननुपालन हुआ था और इसलिए प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किया गया आवेदन उच्च न्यायालय द्वारा मंजूर नहीं किया जाना चाहिए था । इस निवेदन में निम्नलिखित कारणों से कोई सार नहीं है । प्रथमतः, प्रत्यर्थी द्वारा जिन दस्तावेजों को फाइल करने की ईप्सा की गई है, अर्थात्, अधिनियम के अधीन जारी की गई अधिसूचनाएं, वे सुसंगत थीं और वाद/अपील में अंतर्ग्रस्त पक्षकारों के अधिकारों को विनिश्चित करने के लिए भी आवश्यक थीं । द्वितीयतः, इन दस्तावेजों के संबंध में किसी सबूत की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि वे लोक दस्तावेजों की प्रकृति के थे । तृतीयतः, प्रत्यर्थी ने इन दस्तावेजों के प्रति पहले ही निर्देश कर दिया था और अभिवचनों में इन्हें आधार बनाया था और अंततः, प्रथम अपील न्यायालय के पास संहिता के

आदेश 41, नियम 27 के अधीन पक्षकारों को अतिरिक्त साक्ष्य फाइल करने के लिए अनुज्ञात करने की अधिकारिता प्राप्त है, यदि ऐसे दस्तावेज वाद/अपील का विनिश्चय करने के लिए अपेक्षित हों बशर्ते इस संबंध में समाधानप्रद रूप से स्पष्टीकरण दिया गया हो कि इन दस्तावेजों को वाद में फाइल क्यों नहीं किया जा सका था और इन्हें अपील में क्यों फाइल किया गया है । इस मामले में, प्रत्यर्थी ने इस संबंध में स्पष्टीकरण दिया था जिसे उच्च न्यायालय ने स्वीकार कर लिया था और ऐसा करके ठीक किया गया है । (पैरा 27 और 28)

सिविल अपीली अधिकारिता : 2018 की सिविल अपील सं. 4412-4413.

2013 की नियमित प्रथम अपील प्रत्याक्षेप सं. 27 के साथ संयोजित 2012 की नियमित प्रथम अपील सं. 2096 में कर्नाटक उच्च न्यायालय की बेंगलुरू न्यायपीठ के तारीख 16 दिसम्बर, 2014 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री संजय आर. हेग्ड़े, ज्येष्ठ अधिवक्ता, अनिल कुमार मिश्रा-I , प्रांजल किशोर, अंकित धवन और संदीप पुग्गल

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री एस. एस. नागानन्द, ज्येष्ठ अधिवक्ता, राघवेन्द्र एस. श्रीवास्तव, वैंकट सुब्रमण्यम टी. आर., (सुश्री) राहत बंसल, अमित ए. पई, गौतम शिवशंकर और आकाश दीक्षित

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति अभय मनोहर सप्रे ने दिया ।

न्या. सप्रे – इजाजत दी जाती है ।

2. ये अपीलें 2013 की नियमित प्रथम अपील प्रत्याक्षेप सं. 27 के साथ संयोजित 2012 की नियमित प्रथम अपील सं. 2096 में कर्नाटक उच्च न्यायालय की बेंगलुरू न्यायपीठ द्वारा पारित तारीख 16 दिसम्बर, 2014 के उस अंतिम निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने प्रस्तुत अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई नियमित प्रथम अपील खारिज कर दी थी और प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए 2013 के प्रत्याक्षेप सं. 27 और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "संहिता" कहा गया है) की धारा 151 के साथ पठित आदेश

41, नियम 27 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को मंजूर कर लिया था और विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक सं. 1 के संबंध में अभिलिखित इन निष्कर्षों को अपास्त कर दिया था कि अपीलार्थी (वादी) अनुसूची "क" और अनुसूची "ख" संपत्ति के आत्यांतिक स्वामी हैं ।

3. इन अपीलों में अंतर्वलित विवाद्यक का मूल्यांकन करने की दृष्टि से कुछ सुसंगत तथ्यों का नीचे उल्लेख करना आवश्यक है ।

4. अपीलार्थी उस सिविल वाद में, जिससे ये अपीलें उद्भूत हुई हैं, वादी हैं जबकि प्रत्यर्थी प्रतिवादी है ।

5. उस सिविल वाद में, जिससे ये अपीलें उद्भूत हुई हैं, उत्पन्न विवादों का संबंध कोरामंगल ग्राम, बेगुर हुबली, बंगलौर दक्षिण तालुक में एक एकड़ 27 गुंठा माप वाली क्रम सं. 2/1 की भूमि से है (जिसे इसमें इसके पश्चात् "वादगत भूमि" कहा गया है) । यह विवाद अपीलार्थियों (वादियों) और प्रत्यर्थी (प्रतिवादी) के बीच है, जो कि दुग्ध के विनिर्माण और विक्रय के कारबार में लगी एक सहकारी सोसायटी है ।

6. श्री के. जी. येलप्पा रेड्डी नामक व्यक्ति वादगत भूमि का मूल धारक था । वर्ष 1998 में, के. जी. येलप्पा रेड्डी ने वादगत भूमि के संबंध में प्रत्यर्थी के विरुद्ध स्थायी व्यादेश के लिए एक सिविल वाद (1998 का मूल वाद सं. 4875) फाइल किया । उसने अन्य बातों के साथ-साथ, यह दावा किया कि वादगत भूमि पर उसका कब्जा है और प्रत्यर्थी उसके कब्जे में हस्तक्षेप करने का प्रयास कर रहा है ।

7. तथापि, वह वाद सूचना (नोटिस) की कमी के कारण विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 17 फरवरी, 2001 को चलने योग्य न होने के आधार पर खारिज कर दिया गया था । इसी बीच, श्री के. जी. येलप्पा रेड्डी की मृत्यु हो गई और वह अपने पीछे अपने विधिक प्रतिनिधियों के रूप में प्रस्तुत अपीलार्थियों को छोड़ गया ।

8. अपीलार्थियों ने तारीख 14 मार्च, 2007 को वादगत भूमि के संबंध में घोषणा और स्थायी व्यादेश के लिए प्रत्यर्थी के विरुद्ध नगर सिविल न्यायाधीश, बंगलौर के समक्ष एक अन्य सिविल वाद (2007 का सिविल वाद सं. 2143) फाइल किया ।

9. उस वाद में, अपीलार्थियों ने अपने पूर्वज (मृत के. जी. येलप्पा रेड्डी) की मार्फत हक का दावा किया और यह अभिकथन किया कि श्री के. जी. येलप्पा रेड्डी की मृत्यु के पश्चात् अपीलार्थी उत्तराधिकार द्वारा अब

वादगत भूमि के स्वामी हैं और प्रत्यर्थी का वादगत भूमि पर कोई अधिकार, हक और हित नहीं है और न ही उसे वादगत भूमि पर अपीलार्थियों के कब्जे में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार है ।

10. प्रत्यर्थी (प्रतिवादी) ने अपीलार्थियों के दावे से इनकार किया और अन्य बातों के साथ-साथ, लिखित कथन में यह अभिकथित किया कि वादगत भूमि पर उनका अपने स्वयं के अधिकार स्वरूप कब्जा है । यह अभिकथित किया गया था कि राज्य सरकार ने वादगत भूमि का काफी समय पहले लोक प्रयोजन के लिए अर्जन किया था और वादगत भूमि का एक मूल्यवान प्रतिफल के बदले प्रत्यर्थी को आबंटन किया था और तब से वादगत भूमि पर उनका अधिकारस्वरूप कब्जा है और वे अपना कारबार चला रहे हैं ।

11. प्रत्यर्थी ने यह भी दलील दी कि अपीलार्थियों द्वारा फाइल किया गया वाद उनके पिता (श्री के. जी. येलप्पा रेड्डी) द्वारा वादगत भूमि के संबंध में प्रत्यर्थी के विरुद्ध फाइल किए गए पूर्ववर्ती वाद के खारिज हो जाने के कारण पूर्व-न्याय के सिद्धांत द्वारा वर्जित है, जिसमें इसी अनुतोष का दावा किया गया था किन्तु अपीलार्थियों के मृत पिता को ऐसा अनुतोष देने से इनकार कर दिया गया है । प्रत्यर्थी ने अन्य विधिक अभिवचन भी किए, जैसे वाद परिसीमा द्वारा वर्जित है, इसका न तो उचित रूप से मूल्यांकन किया गया है और न ही दावाकृत अनुतोष के संबंध में उचित न्यायालय फीस का संदाय किया गया है, आदि ।

12. विचारण न्यायालय ने यद्यपि तारीख 13 अगस्त, 2012 के निर्णय/डिक्री द्वारा वाद को परिसीमा द्वारा वर्जित होने के कारण खारिज कर दिया था तथापि, उसने अपीलार्थियों को वादगत भूमि का स्वामी अभिनिर्धारित किया था । अन्य शब्दों में, विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी वादगत भूमि पर अपना स्वामित्व साबित करने में समर्थ हुए थे किन्तु उसने वाद को परिसीमा द्वारा वर्जित होने के कारण खारिज कर दिया था । यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि प्रत्यर्थी अपना पक्षकथन साबित करने में असफल रहे चूंकि वे अपने इस पक्षकथन के समर्थन में कोई दस्तावेज फाइल करने में असफल रहे कि वादगत भूमि का राज्य द्वारा अर्जन किया गया था ।

13. अपीलार्थियों ने अपने मामले की खारिजी से व्यथित महसूस करते हुए कर्नाटक उच्च न्यायालय की बंगलौर न्यायपीठ में प्रथम अपील

फाइल की जबकि प्रत्यर्थियों ने उनके विरुद्ध अभिलिखित स्वामित्व संबंधी निष्कर्ष से व्यथित महसूस किया और संहिता के आदेश 41, नियम 22 के अधीन प्रत्याक्षेप फाइल किए । प्रत्यर्थी ने भी अपने पक्षकथन के समर्थन में, अपील में, संहिता के आदेश 41, नियम 27 के अधीन एक आवेदन फाइल किया और राज्य द्वारा भूमि अर्जन अधिनियम (जिसे संक्षेप में "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 4 के अधीन जारी की गई उस अधिसूचना की प्रति फाइल की जिसके द्वारा राज्य ने वादगत भूमि का अर्जन किया था ।

14. उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थियों की ओर से फाइल की गई अपील खारिज कर दी, प्रत्यर्थी द्वारा संहिता के आदेश 41, नियम 27 के अधीन फाइल किया गया आवेदन तथा प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किया गया प्रत्याक्षेप भी मंजूर कर लिया और अपीलार्थियों के वाद को खारिज कर दिया ।

15. इस निर्णय से व्यथित महसूस करते हुए, अपीलार्थियों(वादियों) ने विशेष इजाजत लेकर इस न्यायालय में प्रस्तुत अपीलें फाइल की हैं ।

16. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल श्री संजय आर. हेग्ड़े और प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउन्सेल श्री एस. एस. नागानंद की सुनवाई की गई ।

17. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउन्सेलों की सुनवाई करने और मामले के अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात्, हम इन अपीलों को इस आधार पर खारिज करने के लिए बाध्य हुए हैं कि इनमें कोई सार नहीं है ।

18. हमारी सुविचारित राय में, दो वाद फाइल करना, अर्थात्, पहला अपीलार्थियों के पिता श्री के. जी. येलप्पा रेड्डी द्वारा (1998 का मूल वाद सं. 4875) और बाद में अपीलार्थियों द्वारा फाइल किया गया वह वाद, जिससे ये अपीलें उद्भूत हुई हैं, संपूर्णतः भ्रामक प्रकृति के थे और वे चलाने योग्य नहीं थे, जैसा कि निम्नलिखित कारणों से स्पष्ट होगा ।

19. यह विवादग्रस्त नहीं है कि जैसे ही प्रत्यर्थी ने अपील में, उच्च न्यायालय के समक्ष राज्य सरकार द्वारा अधिनियम की धारा 4 के अधीन जारी की गई अधिसूचना सं. एल-5468-एम.आई. 10-4-15, तारीख 22 जनवरी, 1941 की एक प्रति फाइल कर दी थी, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में अभिलेख पर स्वीकार कर लिया गया था, जिससे यह दर्शित होता है कि राज्य द्वारा वादगत भूमि का अर्जन वर्ष

1941 में किया गया था, मामले में वादगत भूमि के संबंध में विधिक स्थिति स्पष्ट हो गई थी ।

20. वास्तव में, अधिनियम की धारा 4 के अधीन अधिसूचना जारी किए जाने के परिणामस्वरूप, जिसके बाद धारा 6 के अधीन घोषणा की गई थी और उसके पश्चात् अधिनियम की धारा 11 के अधीन अधिनिर्णय किया गया था और अंततः धारा 16 के अधीन वादगत भूमि के स्वामी (अपीलार्थियों के पिता) से वादगत भूमि का कब्जा ले लिए जाने पर वादगत भूमि अधिनियम की धारा 16 के अधीन यथा-उपबंधित समस्त विल्लंगमों से मुक्त आत्यांतिक रूप से राज्य में निहित हो गई थी ।

21. दूसरे शब्दों में, अधिनियम के अधीन अधिसूचनाएं जारी किए जाने और राज्य द्वारा अर्जन कार्यवाहियां आरंभ किए जाने के पश्चात्, जिसकी परिणति बहुत पहले वर्ष 1941 में अधिनिर्णय पारित करने में हुई थी, अपीलार्थियों का हक-पूर्वाधिकारी वादगत भूमि का स्वामी नहीं रहा था और उसने वादगत भूमि को धारित करने और उस पर कब्जे का दावा करने संबंधी अपने सभी अधिकार खो दिए थे ।

22. ऐसी दशा में, अपीलार्थियों के हक-पूर्वाधिकारी (श्री के. जी. येलप्पा रेड्डी) के पास एकमात्र यह विधिक उपचार उपलब्ध था कि वह अधिनियम की धारा 4 या/और धारा 6 के अधीन जारी की गई अधिसूचनाओं की वैधता और शुद्धता को और वह भी वर्ष 1941 में उनके जारी किए जाने के पश्चात् युक्तियुक्त समय के भीतर चुनौती देता । इस संबंध में कोई विवाद नहीं है कि भू-स्वामियों ने, स्वीकृततः अधिसूचनाओं की विधिमान्यता और शुद्धता को चुनौती नहीं दी थी और दूसरी ओर, न्यायालय से अर्जन कार्यवाहियों से संबंधित तथ्य को छिपाते हुए एक के बाद दूसरा वाद फाइल किया और वादगत भूमि पर हक का दावा किया ।

23. हमारी सुविचारित राय में, राज्य द्वारा अधिनियम के अधीन अधिसूचना जारी किए जाने के परिणामस्वरूप, वर्ष 1941 के पश्चात् वादगत भूमि पर न तो अपीलार्थियों के हक-पूर्वाधिकारी और न ही अपीलार्थियों का कोई अधिकार, हक और हित अस्तित्व में था । इसका कारण यह था कि वादगत भूमि पर अपीलार्थियों के हक पूर्वाधिकारी के स्वामित्व संबंधी सभी अधिकार, अधिनियम के अधीन अर्जन कार्यवाहियां पूरी हो जाने के पश्चात् राज्य में निहित हो गए थे । जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, अपीलार्थियों के पास केवल यह अधिकार उपलब्ध था कि वे या तो भूमि अर्जन कार्यवाहियों को अधिनियम के उपबंधों के

विरुद्ध होने के आधार पर चुनौती दें या अधिनियम की धारा 11 के अधीन वादगत भूमि के संबंध में अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर का दावा करें जिसके पास अधिनियम की धारा 18 के अधीन निर्देश कार्यवाहियां की जा सकती हैं और अंततः उच्च न्यायालय के समक्ष उसके पुनर्निर्धारण के लिए अपील करें ।

24. हमें अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी, प्रत्यर्थी द्वारा अपील में, अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में फाइल किए गए दस्तावेजों का खंडन करने के लिए यह दर्शित करने की दृष्टि से कोई दस्तावेज फाइल करने में असफल रहे कि वादगत भूमि के अर्जन के लिए अधिनियम के अधीन जारी की गई अधिसूचनाएं, जिनका प्रत्यर्थी द्वारा अपील में अवलंब लिया गया था, या तो वापस ले ली गई थीं या अपास्त कर दी गई थी या उन्हें प्रभावी नहीं किया गया था । हमारी राय में, एकमात्र यही तथ्य अपीलार्थियों को वादगत भूमि पर स्वामित्व संबंधी उनके अधिकार का दावा करने और उसका प्राख्यान करने में समर्थ बना देता । तथापि, अपीलार्थियों का मामला ऐसा यह नहीं था ।

25. पूर्वगामी चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हमारी यह सुविचारित राय है कि अपीलार्थियों द्वारा फाइल किया गया वह वाद, जिसमें वादगत भूमि पर उनके हक की घोषणा करने और इसके अतिरिक्त स्थायी व्यादेश का दावा करने की ईप्सा की गई है, पूर्णतः भ्रामक है और वह खारिज किए जाने योग्य है ।

26. वास्तव में, प्रत्यर्थी द्वारा अपील में, अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए पृष्ठभूमिक तथ्यों के प्रकाश में, वादगत भूमि के संबंध में न तो हक संबंधी किसी घोषणा का दावा किया जा सकता था या/और सिविल न्यायालय द्वारा ऐसी घोषणा अनुदत्त की जा सकती थी तथा न ही सिविल न्यायालय में ऐसी प्रकृति का कोई वाद फाइल किया जा सकता था । इन दस्तावेजों से पूर्ण रूप से यह स्थापित होता है कि दोनों वाद फाइल किए जाने की तारीख को वादगत भूमि के संबंध में न तो अपीलार्थियों के पूर्वाधिकारी और न ही अपीलार्थियों के पक्ष में कोई प्रथमदृष्ट्या हक अस्तित्व में था ।

27. तथापि, अपीलार्थियों के विद्वान् काउन्सेल ने यह तर्क दिया कि संहिता के आदेश 41, नियम 27क के उपबंधों का अननुपालन हुआ था और इसलिए प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किया गया आवेदन उच्च न्यायालय द्वारा मंजूर नहीं किया जाना चाहिए था । हमारी राय में, इस निवेदन में

निम्नलिखित कारणों से कोई सार नहीं है ।

28. प्रथमतः, प्रत्यर्थी द्वारा जिन दस्तावेजों को फाइल करने की ईप्सा की गई है, अर्थात्, अधिनियम के अधीन जारी की गई अधिसूचनाएं, वे सुसंगत थीं और वाद/अपील में अंतर्ग्रस्त पक्षकारों के अधिकारों को विनिश्चित करने के लिए भी आवश्यक थीं । द्वितीयतः, इन दस्तावेजों के संबंध में किसी सबूत की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि वे लोक दस्तावेजों की प्रकृति के थे । तृतीयतः, प्रत्यर्थी ने इन दस्तावेजों के प्रति पहले ही निर्देश कर दिया था और अभिवचनों में इन्हें आधार बनाया था और अंततः, प्रथम अपील न्यायालय के पास संहिता के आदेश 41, नियम 27 के अधीन पक्षकारों को अतिरिक्त साक्ष्य फाइल करने के लिए अनुज्ञात करने की अधिकारिता प्राप्त है, यदि ऐसे दस्तावेज वाद/अपील का विनिश्चय करने के लिए अपेक्षित हों बशर्ते इस संबंध में समाधानप्रद रूप से स्पष्टीकरण दिया गया हो कि इन दस्तावेजों को वाद में फाइल क्यों नहीं किया जा सका था और इन्हें अपील में क्यों फाइल किया गया है । इस मामले में, प्रत्यर्थी ने इस संबंध में स्पष्टीकरण दिया था जिसे उच्च न्यायालय ने स्वीकार कर लिया था और हमारी राय में, ऐसा करके ठीक किया गया है ।

29. अपीलार्थियों(वादियों) की ओर से विद्वान् काउन्सेल ने कुछ मुद्दों के संबंध में बहस की किन्तु हमारे द्वारा ऊपर विचार में ली गई स्थापित विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, हम उनसे प्रभावित नहीं हुए हैं ।

30. पूर्वगामी विचार-विमर्श को ध्यान में रखते हुए, हम उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए तर्क और निकाले गए निष्कर्ष से सहमत हैं और इन अपीलों में कोई सार नहीं पाते हैं ।

31. अतः, ये अपीलें असफल होती हैं और तद्नुसार खारिज की जाती हैं ।

अपीलें खारिज की गईं ।

ग्रो.